शिक्षा और साहित्य के लिए पद्मश्री-प्रो. गोविन्दचन्द्र पाण्डे

भारतीय मनीषा के जीवन्त प्रतीक

कैलाशचन्द्र पन्त

भारतीय मनीषा की तेजस्विता को आत्मसात करते हुए वैदिक साहित्य का समग्र अनुशीलन कर जिन विद्वानों ने अपने विचार और लेखन से बौद्धिक जगत को प्रभावित किया है, उनमें प्रो. गोविन्दचन्द्र पाण्डे का नाम अग्रणी है। मूलतः इतिहास के शोधार्थी होते हुए भी पाण्डे जी ने दर्शनशास्त्र में अपने गहन अध्ययन और शोध से विद्वत समाज को भारतीय चिन्तन पर नये ढंग से सोचने को विवश किया। पाण्डे जी की विनयशीलता उनकी विद्वता को नई आभा से युक्त करती है और छयासी वर्ष की अवस्था में भी निरंतर अध्ययन और उनकी जिज्ञासा भारत की ऋषि परम्परा का बोध करा देती है। उनसे मिलना और चर्चा करना ज्ञान के विश्व कोष से साक्षात्कार करना है।

1923 में इलाहाबाद में जन्मे पाण्डे जी की मेधा बचपन से ही प्रस्फुटित होने लगी। स्नातक और स्नातकोत्तर परीक्षाओं में वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम रहे। 24 वर्ष की अवस्था में उन्होंने इतिहास में डी.लिट. की उपाधि प्राप्त कर ली और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में ही प्राध्यापक पद पर कार्य प्रारंभ कर दिया। वे गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर भी रहे और 1974 से 1977 तक राजस्थान विश्वविद्यालय के कुलपति रहने के पश्चात 1978 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के कुलपति बनाए गए। सेवानिवृत्त होने के बाद बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग की गायकवाड़ पीठ के विजिटिंग प्रोफेसर बनाये गये। वे इलाहाबाद संग्रहालय के अध्यक्ष, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडीज शिमला के सभापति और सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ हायर

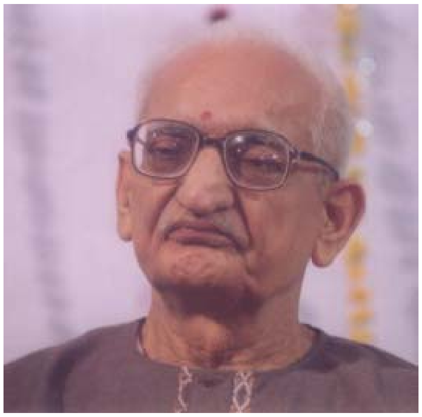

तिब्बती स्टडीज सारनाथ के अध्यक्ष भी रहे। पाण्डे जी ने देश तथा विदेश की अनेक संगोष्ठियों में भागीदारी करने के साथ ही अपने व्याख्यानों से उन भ्रान्तियों का निवारण भी किया जो पश्चिमी विद्वानों ने और भारतीय बुद्धिजीवियों के मन में भारत के चिन्तन और सामाजिक जीवन के बारे में व्याप्त थीं।

वेदों के अगाध ज्ञान का परिचय देने वाला ग्रंथ 'वैदिक संस्कृति' प्रो. पाण्डे की समावेशी दृष्टि और दार्शनिक तर्क प्रणाली का प्रमाण उपस्थित करता है। इसके पूर्व भी वेदों की व्याख्या होती रही है। इसमें शब्द के अर्थ और व्याकरण को लेकर जो भिन्नता पाई जाती है उससे सही व्याख्या में कठिनाई होती रही है। आधुनिक युग के विद्वानों ने वेदों की व्याख्या में इतिहास-दृष्टि को महत्व दिया है, लेकिन उसके आध्यात्मिक और सनातन अर्थ की उपेक्षा कर दी गई है। डॉ. गोविन्दचन्द्र पाण्डे ने वेदों के परिशीलन के लिए आधुनिक पाश्चात्य एवं पारंपरिक दोनों ही प्रकार की व्याख्या का उपयोग किया। ग्रंथ के आमुख में पाण्डे जी ने अपनी दृष्टि स्पष्ट करते हुए स्वयं लिखा है- 'नये पुरातात्विक अनुसंधानों के कारण अब वैदिक युग का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य बदल रहा है। औपनिवेशिक विद्वानों ने जो वेद पर लिखा है उसमें अधिकांशतया वैदिक देवाख्यानों पर तुलनात्मक मिथकीय विज्ञान की दृष्टि प्रबल रही है, तत्व जिज्ञासा की दृष्टि नहीं।' इस कथन से स्पष्ट है कि इस ग्रंथ में पश्चिमी विद्वानों के साथ ही कुमार स्वामी, महर्षि अरविंद और स्वामी दयानन्द जैसे मनीषियों के मतों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस कार्य में कितने व्यापक और गहन अध्ययन की अपेक्षा है यह कल्पना की जा सकती है। पाण्डे जी ने अपनी दृष्टि को एकांगी नहीं रखा। प्रयास किया कि सभी आधुनिक और प्राचीन विद्वानों के अभिमतों को वैचारिकता और तर्क की कसौटी पर परखा जाए और अपना सुविचारित मत प्रस्तुत किया जाए। इस ग्रंथ की एक अन्य विशेषता भी है जो पाण्डे जी के चिंतक व्यक्तित्व के साथ ही उनके भावुक मन की सरसता का परिचय भी देता है। पाण्डे जी ने वैदिक सूक्तियों का हिन्दी अनुवाद कर यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि वेदों में निरूपित आध्यात्मिक सत्य और काव्यात्मकता ज्यादा आकर्षित करती है और उसकी ओर दुर्लक्ष्य नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रयास ने पाण्डे जी के इस वैचारिक ग्रंथ को सरसता प्रदान कर दी और हिन्दी के सामान्य पाठक के लिए भी वेदों का अनुशीलन सरल बना दिया। इन अनुवादों से पाठक को पता चल जाता है कि वेद जीवन में अभ्युदय का गान करते हैं–

अग्नि से पायें सम्पदा
और पुष्टि प्रतिदिन।
यशस्वी वीरवत्तम।।

इसी तरह वायु को संबोधित सूत्र का अनुवाद

वायु, तुम्हारी जुड़ने वाली धारा
पहुँचती है देने वाले के लिए
सब ओर फैलती सोमपान के लिए।।

इन्द्र की स्तुति का संस्कृत से अनूदित यह भावानुवाद वेदों को मूल रूप में पढ़ने की जिज्ञासा बढ़ाने वाला है–

वह जोड़ने में हमारे साथ हो
धन संपदा में, विविधा प्रज्ञा में
वह हमारे पास आये पुरस्कार लिये।

यह उद्धरण सिर्फ पाण्डे जी के व्यक्तित्व को बहुविध कोणों से समझने के लिए काफी है। एक चिन्तक और एक रसिक हृदय का साम्य 'वैदिक संस्कृति' जैसे ग्रंथ को जन्म देता है।

वस्तुत: पाण्डे जी कवि भी हैं। यद्यपि उनकी कविता में उनका दार्शनिक प्रभावी रहता है, फिर भी काव्य की सरसता में बाधा खड़ी नहीं होती। अपनी आस्था को सटीक प्रस्तुत करते हुए पाण्डे जी का कवि यक्ष प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं–

पर मान लो
अदृष्ट वंचना है
सन्तुष्ट रहो तब
दृष्ट धर्म में
क्यों खोजते हो
वह रहस्य
जो दृष्ट के अतीत
लौट जाओ! कुमार
माता-पिता के पास।।

और यह उत्तर तमाम अनास्थावादियों के अदृष्ट के प्रति सन्देहों को खारिज कर देता है, क्योंकि उनकी मान्यता है– 'मन बन जाता नट, वक्ता, कवि सत् का दृष्टा। यह दृष्टा होना ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि दर्शन की आधारभूमि है। 'यक्ष प्रश्न' की भूमिका में उन्होंने ठीक ही कहा है– 'भौतिक समृद्धि का वर्तमान युग परिचित अर्थों में सांस्कृतिक प्रगति का युग नहीं कहा जा सकता। साहित्य मनुष्य के भावनात्मक पक्ष के परिष्कार और विकास से जुड़ा है। संपन्नता का अधिक आग्रह उसके लिए वैसे ही घातक सिद्ध होता है, जैसे अग्नि में बहुत अधिक ईंधन।' एक गंभीर दार्शनिक और इतिहासवेत्ता साहित्यिक धरातल पर कितना अधिक संवेदनशील हो जाता है इसका प्रमाण उपर्युक्त कथन है।

प्रो. गोविन्दचन्द्र पाण्डे ने संस्कृति, दर्शन और साहित्य पर अनेक शोध ग्रंथ लिखे हैं। उनके चिंतनापरक ग्रंथों में 'भारतीय परम्परा के मूल स्वर', 'बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास', 'मूल्य मीमांसा', 'साहित्य, सौन्दर्य और संस्कृति', 'सौन्दर्य-दर्शन विमर्श' महत्वपूर्ण रचनाएँ है। चिंतक होने के साथ ही उनके रसिक मन में 'अग्निबीज', 'क्षण-लक्षण', 'हंसिका' और 'जया' जैसी कृतियों से हिन्दी कविता को समृद्ध किया है। 'वैदिक संस्कृति' ग्रंथ तो हिन्दी वांङ्मय का प्रकाश स्तंभ बन चुका है और 'यक्ष प्रश्न' बहुचर्चित काव्य ग्रंथ है।

पाण्डे जी हिन्दी और संस्कृत के शीर्ष पुरस्कारों से अलंकृत हो चुके हैं। वह कुछ वर्ष भोपाल में भी रहे। वह समय था जब भोपाल के साहित्यकार, बुद्धिजीवी और शोधार्थी उनकी उपस्थिति का लाभ लेते रहे। सरलता, विनम्रता और विद्वता की उस त्रिवेणी में स्नान करने का सौभाग्य जिन लोगों को प्राप्त हुआ उनके लिए वे क्षण अविस्मरणीय बन गए। उनके साथ चर्चा का अर्थ एक तरह से वाग्देवी से साक्षात्कार ही होता था।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।) ❖